अध्याय - प्रथम

भूमिका

1.1प्रस्तावना:-

जब पवित्र या धार्मिक शब्दों का प्रयोग एक विशेषण के रूप में किया जाता है, तब यह भिन्नता के गुण को प्रकट करता है अर्थात कोई वस्तु, घटना या प्राणी साधारण या लौकिक जगत से पृथक और अधिक महत्वपूर्ण है। कई मामलों में यह शब्द अदृश्य अथवा अलौकिक सत्ता के अस्तित्व के साथ मानव के संबंधो को प्रदर्शित करता है। किसी भी मंदिर या पुजारी को इसलिए पवित्र माना जाता है क्योंकि उनका संबंध किसी देवता से होता है। इसी प्रकार किसी वृक्ष या चट्टान को भी इसलिए पवित्र माना जाता है कि उनका संबंध किन्हीं आत्माओं, पूर्वजों अथवा जादुई शक्तियों से होता है।

मानवशास्त्र में धर्म के संदर्भ में पवित्रता का अध्ययन एक महत्वपूर्ण विषय रहा है-

दुर्खिम (1915) ने सर्वप्रथम धर्म के संदर्भ में पवित्रता की धारणा का विस्तृत वर्णन-विवेचन किया है। दुर्खिम ने कहा कि पवित्र वस्तुएं सामाजिक व्यवस्था की प्रतीक होती हैं। कोई भी वस्तु चाहे वह लकड़ी या पत्थर का टुकड़ा हो या कोई मूर्ति हो, अपने आप में पवित्र नहीं होती है, यह तो समाज है जो उसमें पवित्रता की भावना को आरोपित करता है, अतः वह वस्तु समाज का प्रतीक है।

दुर्खिम के अनुसार, 'पवित्र क्षेत्र का इस प्रकार का सीमांकन ही सभी धर्मों का मूल है।'

मैक्स बेबर (1946) ने पवित्रता की धारणाओं को धर्म के विभिन्न रूपों के साथ जोड़ा है। जहां एक ओर 'आदिम'धर्मों में पवित्रता की धारणा को अपने आसपास के जगत के साथ जोड़ा गया, वहीं विश्व धर्मों (हिन्दू, बौद्ध, ईसाई, मुस्लिम) में इसे कुछ वस्तुओं, देवी-देवताओं और व्यक्तियों तक ही सीमित रखा गया है। समकालीन सभी समाजों में किसी न किसी प्रकार

के धार्मिक विश्वास और कर्मकाण्ड पाये गए हैं। मानवशास्त्र में धर्म संबंधी अध्ययनो की दो प्रमुख परंपराएं हैं:

1. बुद्धिवादी और
2. प्रतीकवादी

टायलर (1871) के अनुसार "प्रारम्भिक धर्म का उदभव ईश्वर तुल्य आत्माओं में व्यक्तियों के विश्वासों द्वारा हुआ है।" टायलर की इस धारणा को बुद्धिवादी कहा गया है।

दुर्खिम (1915) के अनुसार "धर्म की प्रकृति व्याख्यात्मक नहीं, अपितु यह सामाजिक व्यवस्था के बारे में प्रतीकवादी धारणाओं पर बल देता है, अर्थात विश्वास, अनुष्ठान और मिथक आदि अलौकिक सत्ता के प्रति लोगों की धारणाओं को मजबूत करते हैं, किन्तु यह लोगों के इन प्रयासों को प्रकट नहीं करता कि आखिरकार इस सत्ता का अस्तित्व ही कहाँ से आया।

पवित्र-संकुल के अध्ययन में प्रयुक्त मुख्य बिन्दु-

धार्मिक केन्द्र- वह स्थान विशेष जहां पर किसी धार्मिक क्षेत्र के विशिष्ट धार्मिक तत्व अथवा पवित्र-संकुल सबसे अधिक मात्रा में पाये जाते है, धार्मिक केन्द्र के नाम से जाना जाता है।

धार्मिक क्षेत्र- धार्मिक क्षेत्र से तात्पर्य एक ऐसे भौगोलिक प्रदेश से है, जहां के निवासियों की जीवन शैली में बहुत कुछ समानता होती है तथा जिससे कुछ समान धार्मिक तत्वो का एक समूह पाया जाता है। बहुधा समान तत्वो के इस समूह को "पवित्र-संकुल" कहा जाता है। आलोचकों ने कहा किसी धार्मिक क्षेत्र को जानने के लिए धार्मिक तत्वो और पवित्र-संकुल की पहचान का तरीका बड़ा असपष्ट है और स्वतंत्र नवाचार भी बहुत कुछ रूप में इधर-उधर से मिलता जुलता है।

सीमांत धार्मिक क्षेत्र– किसी धार्मिक क्षेत्र के केन्द्र में धार्मिक तत्वो में जितनी समानता पाई जाती है, उतनी समानता धार्मिक क्षेत्र की परिधि पर दृष्टिगोचर नहीं होती है। परिधि पर निवास करने वाले समुदायों में पास वाले क्षेत्र के धार्मिक तत्व (लक्षण) भी मौजूद हो सकते है, अतः इस क्षेत्र को सीमांत धार्मिक-क्षेत्र कहा जाता है।

धार्मिक वाहक- ऐसा माना जाता है कि कुछ धार्मिक लक्षणों अथवा लक्षणों के संकुलों के वाहक व्यक्ति अथवा समूह होते है, जो दूसरे परदेशो में प्रवसन करते समय अपने साथ ले जाते हैं।

पवित्र संकुल- किसी पवित्र या धार्मिक क्षेत्र के अंतर्गत प्रकार्यात्मक रूप में समाकलित एवं संरूपित धार्मिक विशेषकों अथवा लक्षणों के समुच्च को पवित्र-संकुल कहते है। यह समुच्च धार्मिक के किसी एक प्रमुख तत्व के साथ इस प्रकार अर्थपूर्ण ढंग से गुथा होता है कि वह एक अंतर संबन्धित समष्टि को एक साकार रूप प्रदान करता है। किसी धार्मिक पर्व से संबन्धित कर्म-कांड, पूजा-पद्धति, पूजा-वस्तुएं, मंत्रोच्चारण, विश्वास, नियम आदि से मिलकर उस पर्व के पवित्र-संकुल की रचना होती है।

पवित्र पदार्थ- धार्मिक अनुष्ठान में प्रयुक्त वस्तुएं, प्रसाद सामग्री, देवी-देवताओं की प्रतिमाएं तथा कला एवं विभिन्न संस्कारों एवं यज्ञ में प्रयुक्त सभी वस्तुएं पवित्र पदार्थों की श्रेणी में आती हैं।

पवित्र वृक्ष- आदिम काल से वृक्षों के पूजन की प्रथा चली आ रही है। अलग-अलग समाजों में अलग–अलग वृक्षों को अलग श्रेणी में रखा गया है, तथा इनकी पूजा की जाती है। इन वृक्षों की पवित्रता के बारे में अनेक मिथक जुड़े हुए हैं।

बलि- सामान्य रूप में बलि से तात्पर्य किसी धार्मिक संदर्भ में पशुओं को मारने अथवा वस्तुओं को नाश करने या चढ़ावे के रूप में अर्पित करने से है। सभी प्रकार की बलि प्रथाओं

की एक विशेषता रही है कि इसमें देवताओं को कोई ऐसी वस्तु चढ़ाई जाती है, जिसे समाज के व्यक्ति महत्वपूर्ण समझते हैं । इसमें भोजन, घरेलू वस्तु, नारियल अथवा किसी पशु या मानव का जीवन भी हो सकता है।

1.2 पवित्र-संकुल की अवधारणा-

वर्ष 1950-1960 के दरमियान शिकागो विश्वविद्यालय के मानव विज्ञानी रेडफ़ील्ड अपने सहयोगी मिल्टन सिंगर, राबर्ट रेडफ़ील्ड तथा उनके शोध छात्र मक्किम मैरिएट, कोहन आदि सम्मिलित सहयोग में सभ्यताओं की विद्वतापूर्ण जानकारी के लिए प्रयत्नशील थे। उन्ही दिनो प्रोफेसर विद्यार्थी रेडफ़ील्ड के संरक्षण में अपना शोधकार्य कर रहे थे। शिकागो विश्वविद्यालय का मानवशास्त्र एक विशिष्ट दल सभ्यता को परिवार, पड़ोस उत्सवों तथा अन्य ऐतिहासिक व सामाजिक संदर्भ में देखने का प्रयत्न कर रहा था। प्रोफेसर विद्यार्थी अपने डाक्ट्रेट शोध कार्य के लिए भारत के चर्चित तीर्थ स्थल (गया) के परिवेश में पवित्र-संकुल की अवधारणा की जाँच कर रहे थे। उनका शोध प्रबंध एक पुस्तक के रूप में भी (1965,1977) प्रकाशित हो चुका था।

रेडफ़ील्ड, सिंगर, कोहन, मैरिएट जैसे अमेंरिकी मानववेत्ताओं ने भारतीय सभ्यता का अध्ययन करने में सैद्धान्तिक और पद्धतिशास्त्रीय समस्याओं के प्रति गहरा लगाव प्रदर्शित किया है। रेडफ़ील्ड (1953) एक सभ्यता के अध्ययन हेतु अपने प्रस्तावों का विकास वृहत एवं लघु परंपराए, सांस्कृतिक विशेषज्ञ, जीवन-शैली, सांस्कृतिक निष्पादन तथा सांस्कृतिक माध्यम जैसी अवधारणाओं से करते हैं। संदर्भ-बिन्दू के रूप में बाहर से आने वाले उच्च एवं बौद्धिक प्रभावों को वृहत परंपरा तथा गाँव के अंदर उपस्थित रहने वाले प्रभावों को लघु परंपरा कहा जाता है। भारत में हमें वृहत परम्पराओं के विकास और उसके बाद उनके शाश्वतीकरण की बहुत दिलचस्प और महत्वपूर्ण मिसालें मिलती है। उदाहरणार्थ रामायण मूलतः ऋषि वाल्मीकि ने संस्कृत में लिखी थी बाद में संत तुलसीदास ने हिन्दी की एक उत्तर-

भारतीय बोली में उसकी पुनर्रचना की जो रमते जोगियों, गवैयों और भिक्षुकों द्वारा चारों ओर फैली तथा अन्य भाषाओं और बोलियों में अनूदित की गयी। हम विशेष रूप से देखते हैं कि रामलीला के मंचन में, बीच-बीच में तुलसीदास द्वारा लिखित रामायण की भाषा के कुछ अंशो का प्रयोग होता है। वृहत परम्पराओं का लघु परम्पराओं की ओर तथा लघु परम्पराओं का वृहत परम्पराओं की ओर प्रवाह भारतीय सभ्यता की एक जानी-मानी प्रक्रिया है। वे सांस्कृतिक विशेषज्ञ शब्द का प्रयोग उन संगठित समूहों के लिए करते हैं, जो वृहत एवं लघु परंपराओं के बीच मध्यस्थता करते हैं। वे सिंगर के सांस्कृतिक स्त्रोत (नाच-गान, अभिनय, मंत्रोच्चारण का तरीका आदि) की अवधारणाओं से परिचित कराते तथा सांस्कृतिक निरंतरता स्थापित करते हैं।

सभ्यता की परिभाषाओं को रेडफील्ड तीन तरीकों से व्यक्त करते है– सर्वप्रथम वे सभ्यता को वृहत एवं लघु परम्पराओं की एक जटिल सांस्कृतिक संरचना की परिभाषा देते हैं। यह परिभाषा संस्कृति-विषयक ऐतिहासिक स्त्रोतों एवं विकास के स्तरों पर बल देते हुए वे सभ्यताओं के भूमिका-धारकों को एक विशेष प्रकार के संगठन के रूप परिभाषित करते हैं, जो एक दूसरे के साथ विशेष संबंध रखते हैं । इसमें ऐसे लोग भी सम्मलित हैं जो परंपरा की सीमा का विस्तार करते रहते है। तीसरे, वे सिंगर के साथ मिलकर सभ्यता की परिभाषा प्रस्तावित करते है। जो एक विशेष विश्व-दर्शन, लोकाचार, प्रवृत्ति, मूल्य व्यवस्था, सांस्कृतिक व्यक्तित्व जैसे शब्दों में संयोंजी गयी हैं।

मिल्टन सिंगर (1955) भारतीय सभ्यता के अध्ययन के लिए रेडफ़ील्ड के कुछ दृष्टिकोण को प्रयुक्त करते हैं। अपने क्षेत्रीय शोधकार्य के दौरान वे रेडफ़ील्ड के सांस्कृतिक विशेषज्ञ की जाँच भारतीय परिवेश में करते हैं। उनके द्वारा प्रयुक्त अन्य अवधारणाएं है- सांस्कृतिक साधन, सांस्कृतिक निष्पादन, सांस्कृतिक चरण । सिंगर 'चिंतन की इकाई' और अवलोकन की इकाई के परस्पर विभेद को सुस्पष्ट करते हैं । इनके अनुसार अवलोकन इकाइयों में प्रार्थना तथा

धार्मिक क्रियाए, पठन-पाठन, धार्मिक संस्कारों का कार्यान्वयन (सांस्कृतिक निष्पादन) आदि है। सांस्कृतिक केन्द्रो (चरणों) को सिंगर ऐसा मानते है जहां सांस्कृतिक निष्पादन सम्पन्न किए जाते है, वह गाँव (क्षेत्र) सांस्कृतिक केंद्र है, जहां गृह का एक भाग मंदिर अन्य स्थल जो किसी पुरोहित के संरक्षण में रहता है, सभी 'पवित्र स्थल' हैं। इन्ही के माध्यम से वृहत एवं लघु परंपराए जीवंत रहती है। इस जीवंत का चित्रण रेडफ़ील्ड ने अपने शोध लेख "परम्पराओं' का सामाजिक संगठन" में किया है।

1.3 मानव विज्ञान में नगरीय अध्ययन –

प्रोफेसर विद्यार्थी ने भारत में नगरों का अध्ययन मानवशास्त्रीय दृष्टिकोण से किया है। इसी विषय पर उन्होने शिकागो विश्वविद्यालय में पी.एच. डी. की उपाधि प्राप्त की थी। उनका शोध विषय था; "हिन्दू सभ्यता में पौराणिक नगर का योगदान।" इस शोध कार्य को रेडफ़ील्ड, सिंगर और मैकिम मैरिएट ने सराहा था। इसी विषय पर विद्यार्थी ने "Sacred complex in Hindu Gaya" के नाम से एक पुस्तक लिखी जिसका प्रकाशन 1966 और 1980 में हुआ। उपर्युक्त पुस्तक में यह बताने का प्रयास किया गया है कि हिन्दू सभ्यता को वृहत एवं लघु परंपरा की अवधारणाओं से किस प्रकार समझा जा सकता है। गया नगर वृहत परंपरा का प्रतिनिधित्व करता है जबकि वहाँ पर धार्मिक अनुष्ठान करने के लिये देश के विभिन्न भागों से लोग आते हैं, अधिकांशतः ऐसे लोग लघु परंपरा वाले होते हैं। इस प्रकार जन साधारण का संपर्क श्रेष्ठजनो से होता है। इसी सुमेलन को विद्यार्थी ने संकुल की संज्ञा दी है।

विद्यार्थी के मतानुसार हिन्दू तीर्थ स्थल या पवित्र नगर (गया) का अध्ययन रेडफील्ड एवं सिंगर द्वारा कुछ अवधारणाओं एवं प्रकल्पनाओं के परीक्षण हेतु एक सही अध्ययन क्षेत्र प्रस्तुत करता है। गया के पवित्र भूगोल को संरचित करने वाले पवित्र केन्द्रो का वर्णन के लिए कुछ विशेष वर्णात्मक शब्दो का उपयोग आवश्यक है जैसे पवित्र समूह, पवित्र खण्ड तथा पवित्र क्षेत्र, पवित्र-संकुल के कुछ तत्वो के विषय क्षेत्र स्पष्ट करने के लिए 'स्थानीय' क्षेत्रीय

तथा व्यापक एवं पौरोंहित की प्रकृति वर्णन करने के लिए 'लोक' लोक सामंतवादी एवं श्रमजीवी पुरोंहित जैसे शब्द में सभी एक पवित्र-संकुल के प्रतिमान के वर्णन करने के लिए एक आदर्श प्रस्तुत करते है। जहां रेडफ़ील्ड तथा सिंगर ने अपने अध्ययन के क्षेत्र भारतीय सभ्यता रखा, वही दूसरी ओरं विद्यार्थी ने अपना क्षेत्र हिन्दू सभ्यता तक सीमित रखा, तथा इन्होने सांस्कृतिक शब्द के स्थान पर धार्मिक शब्द का प्रयोग किया है। तथा इसके अलावा इन्होने रेडफ़ील्ड की अवधारणों में सांस्कृतिक शब्द निकालकर धार्मिक शब्द का समावेश करते हुए धार्मिक केंद्र, धार्मिक अनुष्ठान तथा धार्मिक विशेषज्ञ जैसे विश्लेषणात्मक विचारों को समझने की चेष्टा की। तथा धार्मिक मिश्रण या पवित्र-संकुल शब्द का प्रयोग धार्मिक तत्वो के संयोंग से उत्पन्न होने वाले किसी नगर के नमूनों के लिए किया है।

विद्यार्थी, ने अपनी पुस्तक "सेक्रेड कॉम्प्लेक्स इन हिन्दू गया (1961)" में पवित्र-संकुल की अवधारणा का विकास किया है। "जिसमें उन्होने तीन विश्लेषणात्मक अवधारणाओं और विवरणात्मक पदों जैसे धार्मिक भूगोल, धार्मिक विशेषज्ञ, और धार्मिक अनुष्ठान आदि का विकास किया। (मूल लेख में धार्मिक शब्द के स्थान पर अंग्रेजी के "सेक्रेड" शब्द का इस्तेमाल किया गया है जिसका अर्थ "पवित्र" है।) इन तीन अवधारणाओं के समूह को उन्होने "सेक्रेड काम्प्लेक्स" की संज्ञा दी है। उन्होने इस अध्ययन में राबर्ट रेडफ़ील्ड द्वारा प्रतिपादित साधारण परंपरा तथा महान परंपरा एवं लोक-नगरीय सातत्य की अवधारणा का परीक्षण भी किया है।

उन्होने मिल्टन सिंगर द्वारा विकसित संस्कृति केंद्र, संस्कृतिक अनुष्ठान, संस्कृतिक विशेषज्ञ तथा संस्कृतिक माध्यम की अवधारणा की जाँच भी की है।

विद्यार्थी ने धार्मिक भूगोल के अन्तर्गत गया के धार्मिक केन्द्र तथा स्थानों का उल्लेख किया है कि किस प्रकार लोग भूमि के कुछ खंडो को धार्मिक केन्द्र तथा धार्मिक स्थान मानते हैं।

धार्मिक अनुष्ठान के अन्तर्गत उन्होने 'गया' स्थित विभिन्न धार्मिक केन्द्रो तथा स्थलों में होने वाली पूजा-अर्चना की चर्चा की है। किस प्रकार भारत के विभिन्न भागों से हिन्दू विभिन्न अवसरों पर, 'गया' आकर धार्मिक अनुष्ठान यानी पूजा-पाठ करते है। उन्हे विशेषज्ञयों द्वारा ही धार्मिक अनुष्ठान संपन्न कराए जाते हैं। धार्मिक केंद्र के ये पुजारी समय-समय पर अपने जजमान के गाँव जाकर दान-दक्षिणा संग्रह करते है तथा अपने जजमानों का आतिथ्य स्वीकार करते है। तथा पुजारियों के जजमान संपूर्ण भारत में बिखरे होते हैं ।"

1.4 पवित्र-संकुल में किए गए अध्ययन-

1. **एल. पी. विद्यार्थी** ने "द सेक्रेड कॉम्प्लेक्स इन हिन्दू गया" (1978) अपनी पुस्तक में 'गया' के पवित्र-संकुल का विस्तृत अध्ययन किया है। पवित्र-संकुल के विभिन्न स्वरूपों का भी अध्ययन किया है।

2. **माखन झा** ने "द सेक्रेड कॉम्प्लेक्स इन जनकपुर" (1978) अपनी पुस्तक में 'जनकपुर' के पवित्र-संकुल का विस्तृत अध्ययन किया है। जिसमें उन्होने हिन्दू सभ्यता का सामाजिक, मनोवैज्ञानिक अध्ययन किया है।

3. **डी. के. सामंता** ने "सेक्रेड कॉम्प्लेक्स ऑफ उज्जैन" (1997) अपनी पुस्तक में 'उज्जैन' के पवित्र-संकुल का अध्ययन किया है। जिसमें उन्होने सांस्कृतिक केंद्र और सांस्कृतिक क्षेत्र का अध्ययन किया है।

4. **सरस्वती** ने "द सेक्रेड कॉम्प्लेक्स ऑफ काशी" (1975) पुस्तक में 'काशी' के पवित्र-संकुल का विस्तृत अध्ययन किया है। जिसमें वराणसी केंद्र पर हिन्दू तीर्थयात्री और सांस्कृतिक-अनुष्ठान कर्ता के संबंध पर अध्ययन किया गया है।

5. **एन. पटनायक** "द सेक्रेड कॉम्प्लेक्स इन उड़ीशा" (2000) अपनी पुस्तक में 'उड़ीशा' के पवित्र-संकुल का विस्तृत अध्ययन किया है। पवित्र-संकुल के विभिन्न स्वरूपों का भी अध्ययन किया है।

1.5 संदर्भ साहित्य का अध्ययन-

शोध- क्षेत्र संबन्धित अध्ययन के लिए संदर्भ साहित्य का अध्ययन अत्यंत महत्वपूर्ण है ।

1. **श्रीनिवास** ने "आध्यात्मिक विरासत और भारत के सांस्कृतिक प्रतीक" (1999) अपनी पुस्तक में चित्रकूट की भौगोलिक स्थिति तथा प्राचीन इतिहास तथा राजा भरत के ईमानदारी स्वभाव की चर्चा की है। जिसमें वे राम का राज्य अभिषेक करने के लिए चित्रकूट आए थे।

2. **अशोक कुमार** ने "चित्रकूट के राक्षस" (2005) इस पुस्तक मे चित्रकूट की भौगोलिक स्थिति तथा आधुनिक इतिहास तथा राम का चित्रकूट में रहना तथा तदुपरांत रावण वध का विस्तृत वर्णन किया है।

3. **एस. बंसल** ने "भगवान राम" (2004) इस पुस्तक में चित्रकूट की भौगोलिक स्थिति तथा आधुनिक इतिहास तथा राम का चित्रकूट में आकर रहना तथा वहाँ के प्रकृतिक परिस्थितियों का वर्णन है।

4**. राम वर्मा** ने "भगवान के पहले रामायण" (2010) इस पुस्तक में चित्रकूट की भौगोलिक स्थिति तथा रामायण में वर्णित चित्रकूट का मनोरम दृश्य तथा राम का व्यवहारिक शिष्टाचार की स्थिति को दिखाया गया है।

5**. बुलबुल शर्मा** ने "रामायण" (2008) इस पुस्तक मे चित्रकूट परिस्थितिकी वर्णन तथा अयोध्या के राजा राम चित्रकूट जंगल मे भटकना तथा उनकी पत्नी का हरण रावण द्वारा कर लिया गया, उसे बचाने के लिए हनुमान और बंदर सेना की मदद की जरूरत आदि का वर्णन है।

6. **विवेक राय** ने "चित्रकूट के घाट पर" (1988) इस पुस्तक में लेखक ने चित्रकूट परिस्थितिकी वर्णन तथा महत्व को बतलाया है। तथा चित्रकूट में किस प्रकार से तुलसी को राम के दर्शन रामघाट में हुए आदि का वर्णन है।

7.**पलक विश्वास** एवं अनुपा लाल ने "रामायण'' (2009) इस पुस्तक में सम्पूर्ण रामायण को वर्णित किया गया है।

8. **एम. निगम** ने "बुंदेलखंड का सांस्कृतिक इतिहास"(1983) इस पुस्तक में चित्रकूट के सांस्कृतिक, ऐतिहासिक तथा भौगोलिक परिवेश का वर्णन किया और लेखक ने 234 वे पन्ने में चित्रकूट के महत्व के बारे में बताया है।

1.6 अध्ययन की आवश्यकता-

भारत में विभिन्न धर्मों के लोग पाये जाते हैं, जिनमें हिन्दू धर्म के लोगों की संख्या ज्यादा है। धर्म के मानवशास्त्र में पवित्र या धार्मिक स्थानों को समझने के लिए रेडफ़ील्ड, सिंगर और विद्यार्थी का योगदान बहुत ही महत्वपूर्ण रहा। प्रो. विद्यार्थी ने इसे गति दी तथा हिन्दू गया का अध्ययन 1961 में किया। इसके उपरांत अन्य मानव शास्त्रीय, समाज शास्त्रियों ने अध्ययन किया। जिसमें काशी (सिन्हा और सरस्वती 1969), अयोध्या (वी. एस. उपाध्याय 1974), पुरी (झा 1974), कामाख्या 'असम' (एम. सी. गोस्वामी 1970), कालीघाट 'कलकत्ता' (एस. सिन्हा 1970), चामुंडा मंदिर 'मैसूर' (मोरव और गोस्वामी 1975 और 1977), एवं प्रयाग (बी. के. दुबे 2002) आदि का अध्ययन हुआ। लेकिन चित्रकूट का अध्ययन मेरी जानकारी में किसी मानवशास्त्री ने नहीं किया है। चित्रकूट में भी बहुत से धार्मिक केंद्र है, जिसे समझने एवं परखने की आवश्यकता है।

1.7 अध्ययन का महत्व-

शोधार्थी का अध्ययन चित्रकूट के वृहत परंपरा के संकुल पर है। इस वृहत परंपरा का उल्लेख वाल्मीक कृत रामायण व तुलसी कृत रामचरितमानस में मिलता है। इसका महत्व इसलिए बढ़ जाता है कि उत्तर प्रदेश में पवित्र-संकुल, काशी (सिन्हा और सरस्वती 1969) तथा अयोध्या (उपाध्याय 1969) का अध्ययन किया गया। लेकिन चित्रकूट का अध्ययन नहीं किया गया। चित्रकूट के धार्मिक केन्द्रों मे उपस्थित विशेषज्ञ से मिलकर यह जानने का प्रयास किया कि वह इस पवित्र-संकुल के बारे में क्या विचार रखते है, तथा धार्मिक केन्द्रो में अनुष्ठानिक क्रिया-कलाप आदि को समझने की कोशिश की गयी है। धार्मिक केंद्र के विशेषज्ञ ज्यादातर अपने को ब्राह्मण ही कहते थे, बहुत पूछने पर उनका कहना था क्या करोंगे हमारी जाति जानके हमारी कोई जाति व नाम नहीं है। यदि पूछना है तो इस स्थान के बारे में पुछो जहां तुम आए हो, मेरे बारे में नहीं। इसी प्रकार छायाचित्र अपनी नहीं खीचने देते थे। मंदिर के बाहर लिखा रहता था कि फोटो खीचना वर्जित है। लेकिन मैंने प्रयास किया जिसमें एक मनोहर गंज के पंडे पवन नाम के व्यक्ति ने अपनी तथा वहाँ काम करने वाले लोगों के बारे में जानकारी दी। तथा अपने साथ वाले लोगों से मेरी बातचीत भी करायी। इन सभी पवित्र केन्द्रो (रामघाट, कामतानाथ, स्फटिकशिला, सती-अनुसूइया, गुप्तगोदावरी, हनुमानधारा) में इसी प्रकार की कोई न कोई परेशानी आना स्वाभाविक ही था। कम समय में इन संकुलो का सम्पूर्ण अध्ययन संभव नहीं था। कुछ कमिया जरूर रह गई होंगी, लेकिन मैंने इन कमियों को कम करने का प्रयास अवश्य किया है।

1.8 अध्ययन का उद्देश्य-

किसी भी शोध का उद्देश्य उसकी प्रासंगिकता और सामान्यीकरण पर निर्भर करता है आज के मौजूदा समय में जब पूरा विश्व वैज्ञानिक तकनीकों का इस्तेमाल कर हर असंभव कार्य संभव कर रहा है, वहीं भारत तथा अन्य देशों के कुछ लोगों का धर्म के प्रति झुकाव को देखा गया है।

जो धार्मिक या पवित्र स्थानों में प्रायःधार्मिक कृत्य करते है। तथा अपनी सफलता व विफलता का श्रेय अपने पूजक देवी-देवता को ही समझते है।

इसीलिए चित्रकूट के पवित्र-संकुल के अध्ययन के लिए मेरे मुख्य उद्देश्य निम्न प्रकार से है-

1. चित्रकूट क्षेत्र का समग्रता से अध्ययन करना।
2. धार्मिक केन्द्रों की व्याख्या करना तथा मानशास्त्रीय विश्लेषण करना।
3. विद्यार्थी द्वारा पवित्र-संकुल के अध्ययन में इन तीन अवधारणाओं धार्मिक भूगोल, धार्मिक अनुष्ठान तथा धार्मिक विशेषज्ञ को परखना।

1.9 अध्ययन की परिकल्पनाएं-

1. पवित्र-संकुल धार्मिक भूगोल, धार्मिक अनुष्ठान तथा धार्मिक विशेषज्ञ का संश्लेषण है।
2. हिंदू-तीर्थ का पवित्र-संकुल लघु एवं वृहत परंपराओं के बीच निरंतरता, समझौते तथा सम्मिलन का स्तर प्रस्तुत करता है।
3. तीर्थ स्थल के धार्मिक विशेषज्ञ अपनी विशिष्ट जीवन-शैली द्वारा वृहत परंपरा के तत्व का संचार ग्रामीण जनता तक करते है।
4. पवित्र-संकुल परिवर्तन की प्रक्रिया को प्रस्तुत करते है।

1.10 अध्ययन की सीमाएं-

- **समय की समस्या-** एक गुणवत्तापूर्ण शोध के लिए समय की पर्याप्तता होनी आवश्यक है लेकिन लघु-शोध प्रबंध एक निश्चित और कम समय में किया गया।
- **दूरी की समस्या**- धार्मिक केन्द्र निवास स्थान दूर होने के कारण समय की बर्बादी होती थी। क्योकि प्रतिदिन आने-जाने में ही ज्यादा समय लगता था।
- **प्रतिकूल मौसम**- क्षेत्र कार्य जनवरी से फरवरी में होने के कारण ठण्ड बढ़ने से क्षेत्र कार्य में दिक्कतें आयी।

- **वाहन की समस्या-** कुछ धार्मिक केन्द्र में पहुँचने के लिए वाहन पर्याप्त न होने के कारण दुर्गम पहाड़ियों से रोंजाना गुजरना पड़ता था।
- **सूचनादाता से मिलने की समस्या-** धार्मिक केन्द्र में उपस्थित विशेषज्ञ से मिलने के लिए समय लेना पड़ता था।